इकाई 13 वास्तुशिल्प*

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 अकबर के समय की वास्तुशिल्प योजनायें

13.2.1 संरचना और तकनीक

13.2.2 प्रमुख स्थापत्य के कार्य

13.3 जहांगीर के समय की स्थापत्य योजनायें

13.4 शाहजहाँ के काल की वास्तुशिल्प योजनायें

13.4.1 नवीन विशेषतायें

13.4.2 प्रसिद्ध स्मारक

13.5 मन्दिर निर्माण

13.6 सराय और पुल

13.7 औरंगजेब के समय का वास्तुशिल्प

13.7.1 मुख्य भवन

13.7.2 सफद्र जंग का मकबरा

13.8 सारांश

13.9 शब्दावली

13.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

भारत में सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में मध्य एशिया और परशिया से लाई गई वास्तुकला की विधियों और स्वरूपों का भारत में प्रचलित शिल्प के साथ संलयन देखा गया। जिसके कारण भारत में वास्तुशिल्प के अत्यंत भव्य स्वरूप और योजनायें उभर कर सामने आई। नयी विशेषतायें और नये आकारों ने वास्तुशिल्प के क्षेत्र को मनोहारी बनाने में योगदान दिया। इसके अतिरिक्त, उत्तर भारत में, दिल्ली सल्तनत के नये तुर्की शासकों के तीन सौ साल लम्बे दौर में विशेषकर मंदिरों के बड़ी संख्या में तोड़े जाने के बाद, एक बार पुनः, खासकर मंदिर भवन निर्माण में भी, पहले के आकार और प्रकार में महत्वपूर्ण पुरुत्थान देखने को मिला। वास्तुशिल्प की यह गाथा, इस दौरान बहुदर्शी है, जिसमें मनोरंजक ऐतिहासिक विवरण हैं, जो प्रयोगात्मक अभियानों के हेर–फेर से भरा है, जिसमें महत्वाकांक्षी वास्तुकला की योजनायें, कट्टरता और विनाशकारी कृत्य, पुनरूत्थान और पुनः प्रवर्तन शामिल है।

*प्रो. रवीन्द्र कुमार, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्विविद्यालय, नई दिल्ली।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप यह जान सकेंगे कि–

- मुगल वास्तुशिल्प में नये संरचनात्मक आकार उनकी विशेषतायें और विधियाँ क्या रही थीं, जिनका प्रयोग किया गया, जो अपनाई गईं?
- उस शासन–काल की प्रमुख वास्तुकला (स्थापत्य) की योजनायें कौन सी थीं?
- भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में मंदिर निर्माण की प्रक्रिया क्या रही?
- सार्वजनिक निर्माण में दो महत्वपूर्ण आकार और उनकी व्यापकता, सराय और पुल निर्माण क्या रही? और
- मुगल साम्राज्य के पतन के वर्षों में मुगल स्थापत्य–कला के विनष्ट होने के कारक क्या थे।

13.1 प्रस्तावना

भारत में तेरहवीं शताब्दी में ही स्थापत्य की नवीन शैली की नींव रखी जा चुकी थी। इसमें मेहराबों का उपयोग किया जाता था और इसकी सहायता से गुम्बदों और प्रवेश द्वार का निर्माण किया जाता था। मुगलों ने यह परम्परा जारी रखी और पूर्व–तुर्की तकनीक अर्थात् मेहराब का शहतीर के साथ सम्मिश्रण प्रस्तुत किया। इन सबके मिले–जुले रूप के कारण अपने आप में एक नये प्रकार की शैली विकसित हुई।

इस काल ने मंदिर निर्माण की विभिन्न क्षेत्रों में होने वाली क्रिया को देखा और महत्वपूर्ण सार्वजनिक भवनों के तेजी से बढ़ने, जिसमें सराय और पुल थे, जिससे यात्रा एवं आवागमन में और व्यापार करने में देश भर में सुविधा मिली। इस काल खंड ने मंदिरों को चुन–चुनकर विनष्ट किया जाना, तहस–नहस करना और उनको मस्जिदों में बदला जाना भी देखा जो बाद में इन कट्टरपंथियों के समाप्त हो जाने पर पुनर्जीवित हुए।

वास्तव में, मुगल स्थापत्य अकबर के समय से उभरना शुरू हुआ। उसने देशी और विदेशी तत्वों के मिले–जुले रूप को प्रश्रय किया। देशी कलाकारों को अकबर ने खासकर महत्व दिया। फतेहपुर सीकरी के भवन इसके उत्तम उदाहरण हैं।

अकबर के पुत्र जहांगीर ने भवन निर्माण में कोई खास रुचि नहीं दिखाई, परन्तु जहांगीर का पुत्र शाहजहां स्थापत्यगत कला का महान्तम संरक्षक था। भारत के कुछ बेहतरीन ऐतिहासिक भवनों का निर्माण उसी के शासनकाल में हुआ था। उसके काल में भवन निर्माण में लाल पत्थर का स्थान संगमरमर ने ले लिया और आंतरिक सजावट के लिए बहुमूल्य पत्थरों का इस्तेमाल किया जाने लगा। इसे पैट्राड्यूरा या पच्चीकारी के नाम से जाना जाता है। शाहजहां के काल में ही उभार वाले गुम्बदों और अनेक स्तरों वाली मेहराबों का प्रयोग शुरू हुआ जिससे इमारतों के दृश्य सौंदर्य में वृद्धि हुई।

औरंगजेब के शासनकाल में संसाधनों की कमी थी। औरंगजेब की मानसिकता अपने पिता से बिल्कुल भिन्न थी। इसका असर स्थापत्य शैली पर भी पड़ा। इस युग के भवनों में इस्तेमाल होने वाली वस्तुओं का स्तर सामान्य था और उसमें आडंबर का नामों निशान तक नहीं था।

इसके अतिरिक्त, उसका मंदिरों के प्रति धार्मिक विद्वेष, कट्टरता, प्रमुख धार्मिक हिन्दु तीर्थ स्थलों के प्रति चलायी गयी विध्वंसकारी सोची समझी मुहिम ने मध्यकालीन भारत की विशाल

स्तर पर निर्मित मंदिरों के भवनों की महत्वपूर्ण वास्तुशिल्प को हमेशा के लिये समाप्त कर दिया। हम नीचे दिये गये भागो में दिलचस्प विवरण प्रस्तुत करते हैं।

13.2 अकबर के समय की वास्तुशिल्प योजनायें

मुगल वास्तुकला का रचनात्मक काल अकबर का कार्यकाल रहा। गुंबद और मेहराब के घुमावदार तत्वों को स्थानीय शहतीर विधियों के साथ संविमीत करने के सुंदरतम उदाहरण यह काल खंड प्रस्तुत करता है। यह गाथा आरंभिक प्रयोगों और उनकी सफलतापूर्वक बाद की योजनाओं में प्रयोग किये जाने की स्थिति दिखाती है, जो आगरा के किले और फतेहुपर सीकरी में दिखाई दिया।

13.2.1 संरचना और तकनीक

अकबर के शासनकाल में स्थापत्य के क्षेत्र में देशी तकनीकों को बढ़ावा मिला और अन्य देशों के अनुभव का भी उपयोग किया गया। इस प्रकार अकबर के संरक्षण में पनपने वाली स्थापत्य शैली की निम्नलिखित विशेषताएं उल्लिखित की जा सकती हैं:

क) भवन निर्माण में मुख्य रूप से लाल बलुए पत्थर का उपयोग हुआ;

ख) शहतीरों का अधिकतम उपयोग;

ग) मेहराबों का संरचनात्मक स्वरूप की अपेक्षा अलंकरण के लिए प्रयोग;

घ) गुम्बद ''लोदी'' शैली में बनते रहे, कभी–कभी इसे खोखला बनाया जाता था, परन्तु तकनीकी तौर पर यह सही अर्थों में दोहरा गुम्बद नहीं होता था;

ड़) खम्भे का अग्रभाग बहुफलक युक्त होता था और इन खम्भों के शीर्ष पर ब्रैकेट या ताक बने होते थे; और

च) अंदरूनी हिस्से में अलंकरण के तौर पर स्पष्ट रूप में बड़ी–बड़ी नक्काशी तथा पच्चीकारी की जाती थी और उन्हें चमकीले रंगों से रंगा जाता था।

13.2.2 प्रमुख स्थापत्य के कार्य

अकबर के काल के शायद सबसे पहली इमारत हुमायूँ का मकबरा था (चित्र-1)। वस्तुतः यह इमारत मुगल स्थापत्य शैली के विकास की एक महत्वपूर्ण पहचान है। 1564 ई. में, हुमायूं की मृत्यु के बाद, उसकी पत्नी हमीदा बानों बेगम की देखरेख में इसका निर्माण आरंभ हुआ। इस भवन के स्थापत्य शिल्पी मिराक मिर्जा गियास थे। वे ईरान के रहने वाले थे। वे अपने साथ कुशल ईरानी कारीगर दिल्ली लाये थे। भवन निर्माण में उनकी तकनीक और योग्यता का पूर्णतः इस्तेमाल किया गया। इस प्रकार यह मकबरा भारत में ईरानी अवधारणा के आत्मसातीकरण का प्रतिनिधित्व करता है। सही अर्थों में हुमायूं का मकबरा अकबर के शासनकाल की इमारत है। परन्तु अपनी खासियतों के कारण इसे इस काल से अलग माना जाता है।

हुमायूं के मकबरे में पहली बार बागानों का उपयोग किया गया था और इसे लाल बलुए पत्थर के बनाये तोरणयुक्त चबूतरे पर स्थापित किया गया था। यह आकार में अष्टकोणीय है और एक ऊंचे गुम्बद से आच्छादित है जो वस्तुतः दोहरा गुम्बद है। इसमें दो आवरण हैं और दोनों आवरणों के बीच में जगह छोड़ दी गयी है। आंतरिक आवरण अंदरूनी हिस्से की छत का काम करता है और बाहरी आवरण इमारत के अनुपात में ऊपर की ओर शल्क कंद के समान

उभरा हुआ है। मकबरे के हर एक तरफ मध्य में एक द्वार मंडप है, जिसके साथ नुकीला मेहराब बना हुआ है। यह मुख्य कक्ष में जाने का रास्ता है। इस भवन के अंदर कई कक्ष बने हुए हैं। इनमें सबसे बड़ा कक्ष मध्य में है जिसमें सम्राट की कब्र है। प्रत्येक कोण पर बने छोटे कक्ष परिवार के अन्य सदस्यों की कब्रों के लिए बनाये गये हैं। प्रत्येक कक्ष अष्टकोणीय है और ये तिरछे रास्तों से जुड़े हुए हैं।

चित्र-1: हुमायूँ का मकबरा

साभार : Shashank Shekhar Sinha, *Delhi Agra, Fatehpur Sikri: Monuments, Cities and Connected Histories*, Macmillan, New Delhi, 2021.

हुमायूँ के मकबरे के बाद की, अकबर की भवन–निर्माण योजनाओं, को दो मुख्य समूहों में बांटा जा सकता है। पहले समूह में किलों का निर्माण और कुछ एक महल, जिनमें मुख्यतः आगरा, इलाहाबाद और लाहौर के हैं। दूसरे समूह में मुख्यतया फतेहपुर सीकरी में नई राजधानी के निर्माण का कार्य रखा जा सकता है।

अ) प्रथम चरण

आगरे के दुर्ग को वस्तुतः एक किले महल के रूप में विचार में कल्पित किया गया था। इसकी विशालकाय दीवारें और परकोटे किसी महान् सत्ता और शक्ति की याद दिलाते हैं। किले के भीतर, अकबर ने गुजरात और बंगाल शैली में कई इमारतें बनवायीं थीं। हालांकि, जहांगीरी महल को छोड़कर शाहजहां ने अन्य सभी संचनाओं को तुड़वाकर फिर से निर्मित करवाया था। आज किले का दिल्ली दरवाजा और जहांगीरी महल ही अकबर के काल के भवनों के एकमात्र प्रतिनिधि है।

चित्र-2: दिल्ली गेट–आगरा का किला

साभार: लेखक

आगरे के किले का दिल्ली दरवाजा (चित्र-2) संभवतः अकबर के आरंभिक स्थापत्यगत प्रयास का नमूना है। यह किले का मुख्य प्रवेश द्वार है। इस दरवाजे के स्थापत्य में नयापन है, जो भारत में भवन निर्माण कला के नये युग के आरंभ की सूचना देता है। इस दरवाजे की योजना सरल है। इसका विवरण इस प्रकार है:

- सामने की ओर मध्य में मेहराब पथ था और उसके दोनों ओर झुकी हुई अष्टकोणीय दीवारें थीं;
- पीछे की ओर तोरणयुक्त छत थी और जिसमें मंडप और कंगूरे बने हुए थे; और
- इसमें लाल बलुए पत्थर पर सफेद संगमरमर से अलंकरण किया गया था।

जहांगीरी महल (चित्र-3) का निर्माण अकबर ने करवाया था और यह लाल बलुए पत्थर से बने भवन का उत्कृष्ट नमूना है। अकबर द्वारा किले के भीतर निजी और घरेलू कार्य के लिए बनाये गये भवनों में केवल यही बचा हुआ है। यह हिंदू और इस्लामी भवन निर्माण पद्धति के मिले–जुले रूप का सुंदर नमूना है। इसमें विभिन्न कक्ष बने हुए हैं। पूर्व दिशा के अग्रभाग में प्रवेश द्वार है जो गुम्बदनुमा बड़े कक्ष की ओर जाता है, जिसकी अंदरूनी छत पर काफी नक्काशी की गयी है। इस कक्ष को पार करने के बाद एक मध्यवर्ती खुला आंगन मिलता है। इस आंगन की उत्तर दिशा में कई खंभों से बना एक कक्ष है, जिसकी छत को खंभों, कड़ियों और घुमावदार ताकों से सहारा दिया गया है। दक्षिण दिशा में भी इसी प्रकार का एक कक्ष है। हालांकि पूर्व दिशा में यह सामंजस्य कायम नहीं रखा जा सका है। इस ओर कई कक्ष हैं जो यमुना नदी की ओर बने एक गलियारे में खुलते हैं (चित्र-4)। पूरे भवन के निर्माण में मुख्य रूप से लाल पत्थर, कड़ी और ब्रैकेट या ताक का इस्तेमाल किया गया है, जो इसकी प्रमुख संरचनागत विशेषता को दर्शाती हैं।

चित्र-3: जहांगीरी महल – आगरा का किला

साभार: लेखक

चित्र-4: जहांगीरी महल – आगरा का किला
साभार : Shashank Shekhar Sinha, *Delhi Agra, Fatehpur Sikri: Monuments, Cities and Connected Histories*, Macmillan, New Delhi, 2021.

ख) दूसरा चरण

अकबर की स्थापत्यगत योजना के दूसरे चरण की शुरूआत सीकरी में साम्राज्य की नयी राजधानी के निर्माण के साथ होती है। यह आगरा से 40 किलोमीटर पश्चिम में स्थित है। नयी राजधानी का नाम फतेहपुर रखा गया। फतेहपुर सीकरी एक शहर है। इसका निर्माण इस तरीके से किया गया है कि सहन, दीवाने आम और जामा मस्जिद जैसे सार्वजनिक स्थल निजी महल के अंग बन गये हैं। इस शहर का निर्माण काफी कम समय (1571–1585 ई.) में किया गया और इसके लिए कोई वृहद योजना नहीं बनाई गयी थी। भवन एक दूसरे के आसपास बने थे और एक दूसरे से जुड़े हुए थे। इस परिसर के निर्माण में असममिति का जानबूझकर प्रयोग किया गया है। सभी भवनों में बेहतरीन लाल बलुए पत्थर और परम्परागत शहतीर निर्माण पद्धति का प्रयोग किया गया है। खंभों, कड़ियों, ताकों, टाइलों और स्तंभों का निर्माण स्थानीय पत्थरों से किया गया है उन्हें बिना गारे से जोड़ा गया है।

फतेहपुर सीकरी के भवनों को दो कोटियों में विभक्त किया जा सकता है – धार्मिक और गैर–धार्मिक। धार्मिक भवनों में प्रमुख हैं क) जामा मस्जिद, ख) बुलंद दरवाजा, ग) शेख सलीम चिश्ती की मजार। गैर–धार्मिक भवन कई प्रकार के हैं और इनकी संख्या भी ज्यादा हैं। इन्हें इस प्रकार विभक्त किया जा सकता है: क) महल, ख) प्रशासनिक भवन, ग) अन्य प्रकार के भवन। यह गौर करने की बात है कि आमतौर पर धार्मिक भवनों का निर्माण अर्द्धवृत्ताकार या धनुषाकार शैली में हुआ जबकि गैर–धार्मिक भवनों में शहतीर पद्धति की प्रमुखता है।

चित्र-5: जामा मस्जिद – फतेहपुर सीकरी
साभार: लेखक

जामा मस्जिद (चित्र-5) की योजना बिल्कुल एक मस्जिद के अनुरूप है – मध्य में एक बरामदा, तीन तरफ से तोरण पथ और ऊपर की ओर गुम्बदनुमा संरचना। उपासना गृह की पश्चिमी तरफ तीन अलग–अलग साधनालय या एकांत स्थल बने हुए हैं। इसमें एक गुम्बद और तोरण पथ है। मस्जिद का आम प्रवेश द्वार पूर्व की ओर है। यह प्रवेश द्वार पूर्व की ओर है। यह प्रवेश द्वार आकार में काफी बड़ा और अर्द्ध षट्कोणीय ड्योढ़ी के समान है।

चित्र-6: बुलंद दरवाजा – फतेहपुर सीकरी
साभार: लेखक

1596 ई. में अकबर ने दक्षिणी प्रवेश द्वार के स्थान पर बुलंद दरवाजा (चित्र-6) नामक विजय द्वार निर्मित किया। यह लाल और पीले बलुए पत्थर से बनाया गया है और मेहराबों की रूपरेखा निर्मित करने में सफेद संगमरमर का भी उपयोग किया गया है। बाहर की ओर से सीढ़ियों की ऊंची लंबी कतार के कारण यह और भी ज्यादा ऊंचा और भव्य दिखता है। प्रवेश द्वार में एक विशाल मध्यवर्ती मेहराब है जिससे एक करीने से गुम्बदनुमा छतरियां जुड़ी हुई हैं। 1573 ई. में अकबर के गुजरात अभियान की सफलता के उपलक्ष्य में बुलंद दरवाजा का निर्माण 1602 ई. में हुआ था।

उत्तरी पश्चिमी कोने में स्थित जामा मस्जिद के बरामदे में सलीम चिश्ती की मजार है। (चित्र-7) यह स्थापत्य कारीगरी का एक सुंदर नमूना है और भारत में संगमरमर के कलात्मक उपयोग का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यह 1581 ई. में बनकर तैयार हो गयी थी और मूलतः इसमें संगमरमर का उपयोग अंशतः ही हुआ था। छज्जे को सहारा देता घुमावदार ताक और नक्काशी किए हुए जाली के पर्दे इस मस्जिद की उल्लेखनीय विशेषताएं हैं।

चित्र-7: सलीम चिश्ती का मकबरा – फतेहपुर सीकरी
साभार: Shashank Shekhar Sinha, *Delhi Agra, Fatehpur Sikri: Monuments, Cities and Connected Histories*, Macmillan, New Delhi, 2021.

फतेहपुर सीकरी महल परिसर में अनेक कक्ष और हिस्से हैं। इनमें सबसे विशाल जोधाबाई महल है। यह भव्य और आडंबरहीन है। बाहर की दीवार समतल है। मुख्य भवन अंदर की ओर हैं और सभी एक आंगन में खुलते हैं। उत्तर की ओर तोरणयुक्त गलियारा और बालकनी है। ऊपरी मंजिल के उत्तरी और दक्षिणी हिस्सों में कमरे हैं। इनकी छतों में फांक हैं, जिसे मुल्तान से लाये गये चमकीले बेहतरीन नीले पत्थरों से पाटा गया है।

दीवाने खास के दक्षिण–पूर्व में पांच मंजिली इमारत खड़ी है जिसे पंच महल के नाम से जाना जाता है (चित्र-8)। यह इस महल परिसर का अनूठा भवन है। इसमें जैसे–जैसे ऊपर चढ़ते जाते हैं मंजिलों का आकार छोटा होता जाता है। सबसे ऊपर एक गुम्बदनामा छतरी है। इस भवन के कुछ हिस्सों में लाल बलुए पत्थर की झिर्रियां लगवायी गयी हैं। परन्तु आज इनमें से कोई सही सलामत नहीं है। एक रुचिकर तथ्य यह है कि जिन खंभों पर ये पांच मंजिलें खड़ी की गयी हैं, वे सभी खंभे आकार प्रकार से भिन्न हैं।

चित्र-8: पंच महल – फतेहपुर सीकरी
साभार: लेखक

प्रशासनिक भवनों में, निस्संदेह, दीवाने खास सबसे अलग और खास है (चित्र-9)। इस भवन की योजना आयताकार रूप में की गयी है और बाहर की ओर से इसमें दो मंजिले हैं। इसमें एक सपाट छत है जिसके प्रत्येक कोने के खंभों पर गुंबदनुमा छतरी लगी हुई है। बीच में एक खूबसूरत नक्काशी किया हुआ स्तम्भ है, जिसके विशाल ताक के ऊपर एक वृत्ताकार पत्थर का चबूतरा बना हुआ है। इस चबूतरे से चार रास्ते निकलते हैं। ये समकोणीय रूप से अवस्थित हैं और कक्ष के ऊपरी हिस्से के चारों ओर की वीथी को जोड़ते हैं। इस संरचना का मुख्य स्थापत्यगत आकर्षण केन्द्रीय स्तम्भ है। इसकी धुरी कई प्रकार से निर्मित है और शीर्ष पर इसकी कई शाखाएं हैं, जो कई घुमावदार और दोलायमान ताकों से जुड़ी हैं। इनके सहारे केन्द्रीय चबूतरा टिका हुआ है।

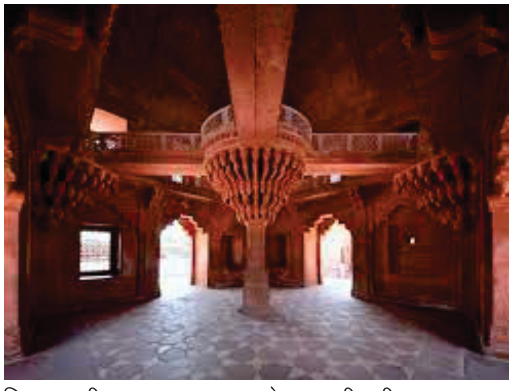

चित्र-9: दीवान–ए खास–फतेहपुर सीकरी
साभार: लेखक

इस श्रेणी का दूसरा महत्वपूर्ण भवन दीवाने आम है। यह एक बड़ा आयताकार बरामदा है जो चारों ओर से स्तम्भों से घिरा हुआ है। सम्राट का चबूतरा पश्चिमी किनारे पर है। यह ऊपर उठी हुई संरचना है जिस पर बैठे हुए व्यक्ति को कोई भी देख सकता है। ऊपर पत्थर की छत है और वह पांच ओर से समान रूप से खुला हुआ है। चबूतरा तीन भागों में विभक्त है, मध्यवर्ती भाग शायद सम्राट के बैठने की जगह होगी जो कि दोनों किनारों से हटकर है और इसमें बेहतरीन चमकीले पत्थर ज्यामितीय आकार में लगाये गये हैं।

पूरे नगर परिसर में भिन्न–भिन्न प्रकार की इमारते फैली हुई हैं:

क) दो कॉरवा सरायें, एक आगरा दरवाजे के तुरंत बाद दाहिनी ओर स्थित है; और दूसरी, जो पहले वाली से बड़ी है, हाथी पोल के बाहर बायीं तरफ स्थित है।

ख) कारखाना भवन दीवाने आम और नौबत खाना के बीच में अवस्थित है, जिसमें कई ईंट के बने गुम्बद हैं, जिनमें विकिरण की क्षमता है। वे क्षैतिज कम हैं।

ग) कारवां सराय के सामने और हाथी पोल के निकट जल–आपूर्ति की व्यवस्था की गयी है। इसमें एक गहरी बावली (सीढ़ीदार कुएं) है जिसके दोनों ओर दो कोष्ठ हैं जिसके जरिए सारे शहर को जल की आपूर्ति की जाती थी।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित वाक्यों में सही और गलत का चिन्ह लगाइए:

(i) अकबर ने अधिकांश इमारतों में निर्माण सामग्री के रूप में सफेद संगमरमर का प्रयोग किया।

(ii) अकबर ने कभी भी दोहरे गुंबद का प्रयोग नहीं किया।

(iii) अकबर की वास्तुकला धरणिक और मेहराबदार शैलियों के मेल–जोल की रही।

(iv) अकबर ने खाली जगह के भरने के लिये टोड़ा का प्रयोग किया।

2) फतेहपुर सीकरी की महत्वपूर्ण धर्मनिरपेक्ष इमारतो पर एक टिप्पणी कीजिए।

.....

.....

.....

3) फतेहपुर सीकरी की अतिंम धार्मिक इमारतों का नाम बताइए और उन पर दो पक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

13.3 जहाँगीर के समय की स्थापत्य योजनायें

1605 ई. में अकबर की मृत्यु के बाद भी उसके उत्तराधिकारियों के नेतृत्व में एक खास मुगल स्थापत्य शैली का विकास होता रहा। अब साम्राज्य की नींव पक्की हो गयी थी और राजकोष

में अपार धन इकट्ठा हो गया था। जहांगीर और शाहजहां ने इसका जमकर फायदा उठाया और कला के विकास की ओर ध्यान दिया।

आलीशन भवनों का लेखा शुरू होता है यादगार निर्माण, अकबर का मकबरा, जो दिल्ली रोड़ पर आगरा से आठ किलोमीटर पर सिकन्दरा में स्थित है। अकबर का मकबरा इस युग का पहला प्रमुख और उल्लेखनीय भवन है (चित्र-10)। यह आगरा से आठ किलोमीटर दूर दिल्ली मार्ग पर सिकन्दरा में अवस्थित है। अकबर ने इसकी रूपरेखा खुद बनायी थी और इसका निर्माण कार्य अपने जीवन काल में ही आरंभ करवा दिया था परन्तु उसकी मृत्यु के समय यह कार्य अधूरा था। इसके बाद जहांगीर ने इसकी मूलरेखा में परिवर्तन करके इसे नये रूप में निर्मित करवाया और इस भवन को पूरा किया। आज यह पूरा परिसर जिस रूप से खड़ा है वह अकबर और जहांगीर की स्थापत्यगत योजनाओं का असाधारण सम्मिश्रण है।

चित्र-10: अकबर का मकबरा – सिकंदरा, आगरा
साभार: Shashank Shekhar Sinha, *Delhi Agra, Fatehpur Sikri: Monuments, Cities and Connected Histories*, Macmillan, New Delhi, 2021.

इस परिसर के बीच में मकबरा स्थित है जो चारों ओर से बागान से घिरा हुआ है। प्रत्येक ओर की चहारदीवारी के मध्य भाग में प्रवेश द्वार बने हुए हैं।

मध्य में स्थित मकबरे वाला भवन चौकोर आकार का है और इसमें तीन मंजिलें हैं। पहली मंजिल वस्तुतः एक छतयुक्त चबूतरा है जो तहखाने का काम करता है। इस चबूतरे के भीतर शवागार कक्ष के चारों ओर शव कक्ष बने हुए हैं और दक्षिण दिशा में एक पतला ढँलवा गलियारा है जो कब्र तक जाता है। बीच वाले हिस्सों में लाल बलुए पत्थर से बने तीन स्तर हैं, जिनमें पूरी तरह शहतीरों का उपयोग किया जाता है। ऊपरी मंजिल पर लाल बलुए पत्थर के स्थान पर सफेद संगमरमर का उपयोग किया गया है। इसमें एक खुला सभागार है, जो चारों ओर से जालियों से मुक्त स्तंभावलियों से घिरा हुआ है। मकबरा चहारदीवारी के प्रवेश द्वार से गुफाओं और सेतुपथों से जुड़ा हुआ था। परन्तु इसमें केवल दक्षिण की ओर से ही प्रवेश किया जा सकता था, बाकी प्रवेश द्वार दिखावटी थे जिनका निर्माण एकरूपता के लिए किया गया था।

दक्षिणी प्रवेश द्वार दो मंजिला था जिसके प्रत्येक कोने पर सफेद संगमरमर की गोल मीनारें खड़ी थीं। सम्पूर्ण प्रवेश द्वार का ढांचा रंगीन पलस्तर के रंग के पत्थर से अलंकृत है और इसमें संगमरमर जोड़ा गया था, इसमें खास बात यह है कि इस अलंकरण में परम्परागत फूल–पत्ती के बेलबूटों और आयतों के अतिरिक्त, गज (हाथी), हंस, पद्म (कमल), स्वास्तिक और चक्र का भी प्रयोग किया गया था। सिकन्दरा स्थित अकबर के मकबरे का स्थापत्यगत

महत्व इस बात से सिद्ध होता है कि इसके बाद बनने वाले अनेक मकबरों में इस भवन की छाप दिखायी पड़ती है। लाहौर के निकट शाहदरा में स्थित जहांगीर का मकबरा और आगरा स्थित नूरजहां के पिता मिर्जा गियास बेग का मकबरा इसके उत्तम उदाहरण हैं।

अपने पिता मिर्जा गियास बेग के कब्र पर नूरजहां ने 1622–28 ई. में इतमादुद दौला का मकबरा निर्मित किया (चित्र-11 व 12)। यह मकबरा अकबर के काल के बाद के स्थापत्यगत परिवर्तन का सूचक है। जहांगीर और शाहजहां के शासनकाल के स्थापत्य और अकबर के स्थापत्य में एक खास अंतर सूक्ष्मता और भव्यता का है। इस ढांचे में इसी सूक्ष्मता की अवधारणा की झलक मिलती है।

चित्र-11: इतमादुद दौला का मकबरा – आगरा
साभार: लेखक

मकबरा चौकोर है जो थोड़े से उठे हुए चबूतरे पर बना हुआ है। प्रत्येक कोने पर चार गुम्बद युक्त अष्टकोणीय मीनारें हैं। केन्द्रीय कक्ष के चारों ओर बरामदा है, जो खूबसूरत संगमरमर की जाली से घिरा हुआ है और इस पर मोजेक और पित्राड्यूरा किया हुआ है। केन्द्रीय कक्ष में इतमादुद दौला और उसकी पत्नी की कब्र है, जो पीले संगमरमर की बनी है। बगल के कमरे रंगीन फूल पत्तियों से अलंकृत हैं। सफेद संगमरमर का मकबरा चारों ओर से बागों और दीवारों से घिरा बड़ा खूबसूरत दिखता है। इसके चारों ओर लाल बलुए पत्थर के बने चार प्रवेश द्वार हैं।

चित्र-12: इतमादुद दौला का मकबरा – आगरा
साभार: Shashank Shekhar Sinha, *Delhi Agra, Fatehpur Sikri: Monuments, Cities and Connected Histories*, Macmillan, New Delhi, 2021.

यह ध्यान देने की बात है कि जहांगीर चित्रकला का बहुत बड़ा प्रेमी और संरक्षक था। उसे जानवरों, पेड़–पौधों, फूलों, आदि से अगाध स्नेह था। यह उसके काल के चित्रों से भी प्रमाणित होता है। इसीलिए उसने भवनों की अपेक्षा बागानों और फुलवारियों के निर्माण में अपेक्षाकृत अधिक रुचि दिखाई। कश्मीर में स्थित शालीमार बाग और निशात बाग जैसे मुगल बागान जहांगीर की इसी रुचि के परिचायक हैं।

13.4 शाहजहाँ के काल की वास्तुशिल्प योजनायें

जहांगीर के विपरीत उसका पुत्र और उत्तराधिकारी शाहजहां एक महान भवन निर्माता था। उसके शासनकाल के दौरान भवन निर्माण में संगमरमर का बड़े पैमाने पर सर्वोत्कृष्ट कलात्मक उपयोग हुआ। उसके कार्यकाल में निर्मित भवनों का लेखा निम्न प्रकार देखा जा सकता है:

13.4.1 नयी विशेषतायें

भवन निर्माण कला के क्षेत्र में शाहजहां का शासनकाल संगमरमर के प्रयोग का काल है। लाल बलुए पत्थर का स्थान संगमरमर ने ले लिया और इसका बेहतरीन प्रयोग होने लगा। इस कारण कुछ शैलीगत परिवर्तन भी आये, जो इस प्रकार हैं:

क) मेहराब को नया रूप दिया गया। इसमें घुमावदार फूल–पत्ती का उपयोग होने लगा जिसमें आमतौर पर नौ नुकीले सिरे होते थे;

ख) रंगे हुए मेहराब के संगमरमर के तोरण पथ इस काल की आम विशेषता हो गयी;

ग) गुम्बद केंद्रीय स्वरूप ग्रहण करने लगा और इसमें एक प्रकार की तंगी भी आने लगी। दोहरे गुम्बद का आम चलन हो गया;

घ) जहांगीर के शासनकाल के उत्तरार्द्ध से पच्चीकारी का एक नया तरीका सामने आया जिसे पित्राड्यूरा के नाम से जाना जाता है। इस पद्धति के तहत अशम, लेजुलाइट, सुलेमानी, चीनी मिट्टी, पुखराज और कार्नेतियन जैसे पत्थरों को संगमरमर में बड़ी नफासत के साथ फूलपत्तियों के रूप में जड़ा जाता था।

13.4.2 प्रसिद्ध स्मारक

शाहजहां का शासनकाल भवन निर्माण में संगमरमर के बड़े पैमाने पर सर्वोत्कृष्ट कलात्मक उपयोग का था। शाहजहां ने निम्नलिखित प्रकार के भवन बनवाए:

क) किले रूपी महल, मसलन दिल्ली का लाल किला;

ख) मस्जिदें, उदाहरणस्वरूप आगरे के किले में स्थित मोती मस्जिद और दिल्ली की जामा मस्जिद; और

ग) बाग से घिरे मकबरे, उदाहरणस्वरूप ताज महल।

चित्र-13: लाल किला – दिल्ली

साभार: Dr. Neeraj Sahay, Professor of History, Sri Venkateswra College, Delhi University, New Delhi His collection of photographs can also be accessed at https://meghutsav.aminus3.com/archive/

यहां हम शाहजहां के शासनकाल के दौरान निर्मित अधिक महत्वपूर्ण और प्रतिनिधि भवनों की चर्चा करेंगे।

लाल किला (चित्र-13) आयताकार है और इसकी उत्तरी दीवार यमुना नदी के पुराने बहाव क्षेत्र से सटी हुई है। दिल्ली दरवाजा और लाहौरी दरवाजा दो प्रमुख प्रवेश द्वार हैं। दीवार के साथ–साथ एक नियमित दूरी पर विशाल गोलाकार बुर्ज है। दरवाजों के दोनों ओर अष्टकोणीय मीनारें हैं। इसमें अंधेरी गलियां हैं और इसके ऊपर बुर्ज बने हुए हैं। नदी की दिशा को छोड़कर दीवार से सटी हुई खाई बनी हुई है। किले के अंदर अनेक उल्लेखनीय भवन हैं जिनमें दीवाने आम, दीवाने खास और रंगमहल महत्वपूर्ण हैं। दीवाने आम और रंगमहल छतयुक्त वीथियां हैं, इसमें बलुए पत्थर के स्तंभ है जिन पर संगमरमर के चूर्ण का मजबूत प्लास्टर किया हुआ है। दीवाने आम की पूर्वी दीवार के साथ सम्राट का सिंहासन वाला चबूतरा बना हुआ है जिसकी छत बंगाल स्थापत्य की शैली में निर्मित है। इस इमारत की पूर्वी दिशा में रंगमहल स्थित है, जिसके आगे एक खुला बरामदा है और पत्थर की ओर रंगमहल से मिलता जुलता दीवाने खास है। इन सभी इमारतों की दीवारों, स्तंभों और खंभों पर फूल–पत्तियों का अलंकरण है।

आगरा के किले की मोती मस्जिद में खुले तोरणयुक्त प्रार्थना कक्ष का इस्तेमाल कर शाहजहां ने एक नया प्रयोग किया। इसके अलावा मस्जिद में मीनारें भी नहीं बनायी गयीं। इनके स्थान पर प्रार्थना कक्ष के चारों कोनों पर छतरियों का उपयोग किया गया। एक अर्द्धचंद्राकार तोरण के ऊपर तीन उभरे हुए गुम्बद बनाये गये थे। पूरी इमारत संगमरमर से बनी है और कालें संगमरमर से उन पर कुरान की आयतें खुदी हैं, जिससे इसका सौन्दर्य और भी बढ़ गया है।

दिल्ली की जामी मस्जिद (चित्र-14) फतेहपुर सीकरी की जामी मस्जिद का विस्तारित और बड़ा रूप है और यह भारत की अपने आप में एक बड़ी इमारत है। यह एक ऊंचे चबूतरे पर बनी हुई है जिसके चारों ओर तोरण पथ है जिन्हें दो तरफ से खुला छोड़ दिया गया है। मुख्य प्रवेश पूर्वी दिशा से है और ऊपर चढ़ने के लिए सीढ़ियां बनी हुई हैं। इससे इमारत की ऊंचाई का आभास बढ़ जाता है। उत्तरी और दक्षिणी भाग के मध्य में दो छोटे प्रवेश द्वार हैं। मस्जिद के अंदर की योजना फतेहपुर सीकरी की जामी मस्जिद के अनुरूप है – तीन तरफ स्तंम्भावलियां हैं और चौथी तरफ उपासना स्थल है। उपासन स्थल के ऊपर संगमरमर निर्मित तीन बाहर की ओर उभरे हुए केंद्रीय गुंबद हैं। पूरी इमारत लाल बलुए पत्थर से बनी है और उनमें प्लास्टर के स्थान और चौखटों के ढांचे को अलंकृत करने के लिए संगमरमर का उपयोग हुआ है।

चित्र-14: जामी मस्जिद – दिल्ली
साभार: लेखक

निस्संदेह ताज महल शाहजहां की सर्वोत्कृष्ट और अनुपम रचना है (चित्र-15)। ताजमहल एक चौकोर इमारत है, जिसके चारों ओर और चारों कोनों पर एक–एक झिरीदार कोष्ठिका बनी हुई हैं। इस इमारत के शीर्ष पर खूबसूरत उभरे हुए गुम्बद हैं जिनके ऊपर उलटा कमल कलश और एक धातु निर्मित कलश अवस्थित है। चबूतरे के चारों कोनों पर चार वृत्ताकार मीनारें हैं, जिनके शीर्ष पर स्तम्भयुक्त बुर्जियां हैं। अन्दर की ओर एक केन्द्रीय कक्ष हैं जिसके आसपास प्रकोष्ठ हैं, जो एक दूसरे से एक प्रकाशयुक्त गलियारे से जुड़े हुए हैं। मुख्य कक्ष की छत अर्द्धवृत गुंबदाकार है। यह दोहरे गुम्बद के अंदर का हिस्सा है। आयतों की नक्काशियों और पच्चीकारियों से बाहरी ओर का अलंकरण किया गया है और अंदर की ओर पित्राड्यूरा किया गया है। भवन–निर्माण के काम में लाया गया संगमरमर उच्च कोटि का है। इसे जोधपुर के निकट मकराना की खदान से लाया गया था। मुख्य इमारत के सामने की फुलवारी चार बराबर हिस्सों में विभक्त है। दो नहरें इन्हें चार हिस्सों में बाँटती हैं। मुख्य कक्ष में बनी स्मारक समाधि मूलतः सोने की नक्काशी की गयी जाली से घिरी हुई थी। परन्तु बाद में औरंगजेब ने इसे हटाकर संगमरमर की जाली लगवा दी।

चित्र-15: ताज महल – आगरा
साभार: Shashank Shekhar Sinha, 'What Really Ails the Taj Mahal?', *The Wire,* 8 July 2018. https://thewire.in/urban/what-really-ails-the-taj-mahal

ताजमहल की दृश्य और स्थापत्य सुंदरता इसकी संरचना की योजना में निहित है। यमुना नदी की किनारे एक ऊंचे स्थान पर बनी यह संरचना भव्य लगती है। स्मारक की विशाल खुले आकाश की पृष्ठभूमि इसकी दृश्य सुंदरता में अत्यधिक वृद्धि करती है, क्योंकि इसके आस पास कोई और ईमारत नहीं है इसलिए भी यह एक अकेला संगमरमर का गुम्बद क्षितिज में उगता प्रतीत होता है।

पित्रा ड्यूरा पत्थर पर चित्रकारी

मेफेयर गैलेरी गाइड 30 अगस्त 2018 ब्लाग

पत्थर पर चित्रकारी की तकनीक बहुमूल्य है और बहुत अधिक प्रयोग मे लाई गई है। इसे आभूषणों के प्राचीन बक्सों से लेकर ताज महल की दीवारों तक में पाया जा सकता है।

तकनीक का विकास – अक्सर इसे पत्थर पर चित्रकारी कहा जाता है फ्लोरेंटाइन पुनर्जागरण काल की अनेकों उपलब्धियों मे से एक है, और इस ने कुछ विशेष अद्भुत निर्माण सजाए हैं।

इसे अच्छी तरह से इस्तेमाल करना, विख्यात रूप से जटिल कौशल है और यह शिल्पकारी, भीतरी सजावट और पच्चीकारी के बीच की कला है। पत्थर पर चित्रकारी के कलाकार को उक्त तीनों कलाओं मे सिद्धहस्त होकर दिखाना पड़ता था ।

पत्थर पर चित्रकारी क्या है?

पित्रा ड्यूरा इटली भाषा का एक शब्द है जिसका शाब्दिक अर्थ 'कठोर पत्थर' है। इसे कभी कभी बहुवचन मे भी बोला जाता है, पिटरे ड्यूरे या 'कठोर पत्थर' और बहुत बार अक्सर इसे अंग्रेजी मे 'फ्लोरेंटाइन पच्चीकारी' कहते हैं।

फिर भी इसे विभिन्न रंगों के और आकार के पत्थरों को सजा कर लगाने की तकनीक के नाम से संदर्भित किया जाता है ।

जैसा कि हम देखते हैं कि भारत– एक अन्य स्थान जहां यह तकनीक लोकप्रिय है। इस तकनीक को पच्चीकारी के नाम से जाना जाता है ।

पित्रा ड्यूरा की तकनीक और प्रभाव (मारक्यूटरी) मीनाकारी से मिलता जुलता हुआ है (मारक्यूटरी एक विधि है जिसमे रंगीन लकड़ी के छोटे छोटे टुकड़ों या अन्य सामग्री को फर्श पर बिछाया जाता है ,मुख्यतया फर्नीचर को सजाने मे इस विधि को काम में लाया जाता है। मीनाकारी की तकनीक का प्रयोग नाजुक सजावटी आकारों, परिकल्प या चित्रों के लिए किया जाता है जो आमतौर पर उच्च गुणों वाले और विस्तृत विवरण के साथ होता है)। दोनों ही जोड़ लगाने की विधियाँ हैं। जहां मीनाकारी की जरूरत होती है लकड़ी के कटे हुए छोटे टुकड़े या अन्य सामग्री सजावटी परत के लिए काम आते हैं, मीनाकारी मे पत्थरों का उपयोग किया जाता है ।

इसके अतिरिक्त, पत्थर की टाईल को बिछाने की विधि के रूप मे देखते हुए मीनाकारी भी एक तरह से पच्चीकारी से मिलती हुई तकनीक है।

फिर भी इनमे अंतर है, जबकि मीनाकारी वाली टाईल मोटे तौर पर। एक ही आकार की और नाप की होती हैं और उनसे बनने वाली छवि भिन्न रंगोवाली टाईल को नियंत्रित

करके पाई जाती है। पच्चीकारी मे टाईलों को बनाए जाने वाले चित्र के अनुरूप काटा जाता है।

सामान्य रूप से पुरातन पच्चीकारी मे फूलों और फलों के आकार बनाए जाते थे। पच्चीकारी मे उपयोग किया जाने वाला पत्थर कठोर होना जरूरी होता था तकनीकी भाषा मे उनका मोह के पैमाने पर (खनिजों की कठोरता का मोह का पैमाना (मौज), जो 1 से 10 तक का गुणात्मक वर्गीय पैमाना है) 6 डिग्री से 10 डिग्री के बीच मे होना जरूरी था, जो विभिन्न खनिजों का खुरचने की कठोरता के क्रम से लगाता है, जिसमे कठोर खनिज उससे कम कठोर पर खुरचने का निशान बनाता है। यह पैमाना 1822 मे जर्मन **भूगर्भ शास्त्री और खनिज विज्ञानी फ़्रेडरिक मोह ने तैयार किया था।** यह खनिज विज्ञान मे कठोरता की बहुत सी परिभाषाओं मे से एक थी, जिनमे से कुछ और अधिक परिणामात्मक हैं –ताकि उनको बिना तोड़े हुए काटा जा सके ।

सामान्य रूप से प्रयोग किए जाने वाले पत्थर विभिन्न प्रकार के रंगों वाले संगमरमर होते हैं, साथ ही साथ मूल्यवान रत्न जैसे स्फटिक, गोमेद, सूर्यकांत और बृहममणि, और यहाँ तक कि कभी कभी बहुमूल्य रत्न जैसे पन्ना, माणिक्य और नीलम।

पच्चीकारी (पित्रा ड्यूरा) किस प्रकार की जाती है ?

पित्रा ड्यूरा का मूल सिद्धांत पत्थर के टुकड़ों को एक योजना के अनुसार इस प्रकार सजाना है कि उनके जोड़ बिल्कुल न दिखाई दें और इस प्रकार मिलने वाला परिणाम द्विआयामी हो। इसके मुख्य चरण इस प्रकार हैं:

प्रथम, पहले पच्चीकारी का स्वरूप तैयार किया जाएगा और फिर उसे छापा जाएगा। रंगीन पत्थरों को जिस प्रकार की योजना हो उसी मोटाई मे अलग अलग आकारों मे काटा जाएगा।

पत्थरों की कटिंग, परंपरा के अनुसार एक लोहे के तार से की जाती है, जिनको विभिन्न प्रकार के एक लसदार चिपकाने वाले तरल पदार्थ से एक दूसरे से जोड़ कर रखा जाता है, ताकि पत्थरों का किनारा सफाई से जुड़ा रहे।

नमूना तब पत्थर पर से काट लिया जाता है । रंगीन पत्थरों के टुकड़ों को तब खाली जगहों पर चिपका दिया जाता है जहां पर रेखांकन किया गया होता है ।

एक बार पत्थरों को स्थापित कर दिए जाने के बाद उनको एक लसदार चिपकाने वाले तरल पदार्थ से भर दिया जाता है, और कोई स्थान रिक्त रह जाने पर उसमे गेसो भर दिया जाता है (गेसो एक सफेद पुताई का मिश्रण है जिसमे चुना, खरिया मिट्टी और रंग द्रव्य होता है । इसे पुताई से या अन्य सामग्री से पहले आरंभ में लगाया जाता है जिस पर पुताई की जाती है), जिससे पट्टी के आधार को मजबूत किए जा सके। तैयार हो चुकी पटिया पर यह पोलिश लगायी जाती है। खुरदुरे पत्थरों को मोम से चिपकाया जाता है ताकि सतह को चिकना किया जा सके।

पच्चीकारी वाली पटिया सामान्यतः चौड़ी होती हैं, यद्यपि ऐसे भी अवसर आते हैं, जब इसको कम उभरी हुई नक्कासी के लिए इंतजाम मे लाया जाता है ।

पच्चीकारी का असली कौशल पत्थरों के चुनाव ,उनको काटा जाना और उनको सही ढंग से बिछाने के काम मे दिखाई देता है। दो पत्थरों के बीच के जोड़ बिल्कुल गायब हो जाने चाहिए। यह तभी किया जा सकता है जब टाईल के टुकड़ों को सही आकार मे एक निश्चित कोण के आधार पर काटा जा सके, ताकि वे एक दूजे के साथ ठीक से आपस मे फिट बैठें ।

टुकड़ों को बिछाने वाला प्रभावी टुकड़ों को इस प्रकार चुनेगा और लगाएगा कि उनका स्वभाव प्राकृतिक विवरणों को प्रस्तुत करेगा, जैसे कि छाया और रगत मे फरक साफ दिखे। यही वो जगह है जहां पर पच्चीकारी की कला बहुत करीब से चित्रकारी से मिल जाती है ।

पच्चीकारी की शुरुवात कहाँ से हुई?

पत्थरों पर सजावटी काम पच्चीकारी सबसे पहले पुरातन रोम मे दिखई दिया, जिस कला को ओपस सेकटाइल के नाम से जाना जाता था। इसमे पत्थरों को एक निश्चित आकार बनाने के लिए उपयोग किया जाता था इसी प्रकार अन्य सामग्री भी जैसे सीप और शीशा भवन के फर्श और दीवारों पर प्रयोग किया जाता था ।

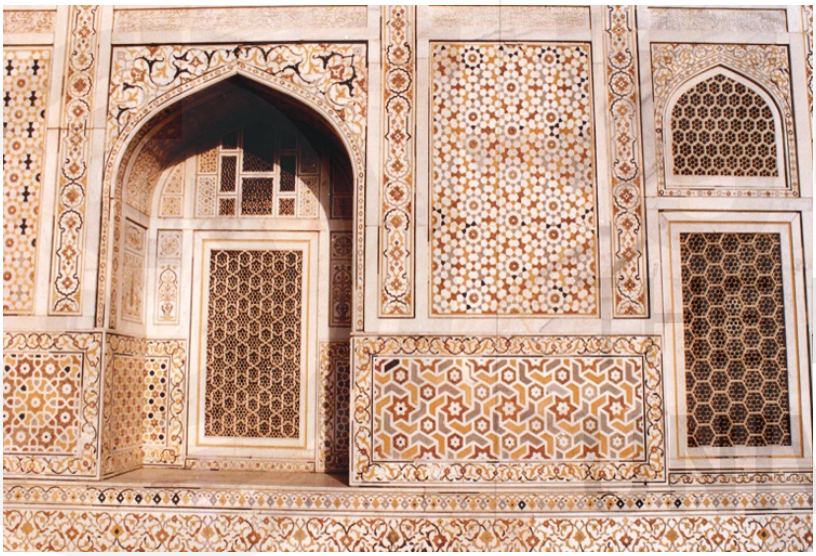

चित्र-16: पिएत्रा ड्यूरा
साभार: लेखक

यह परंपरा मध्य काल मे बाईजेंटीनियाई साम्राज्य मे लगातार चलती रही, और एक बार फिर रोम मे 16 वीं शताब्दी मे पुनर्जीवित हुई।

यह वस्तुतः फ्लोरेंस के लोगों ने सबसे पहले इस कला के बारे मे, सजावट के लिए नहीं बल्कि पत्थर पर की जाने वाली चित्रकारी के रूप मे, सोचा।

भारत मे पच्चीकारी

16 वीं शताब्दी से इस तकनीक का ज्ञान फ्लोरेंस से चलकर फैलता हुआ भारतीय महाद्वीप तक पहुँच गया।

भारत मे सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी मे पच्चीकारी का बहुत जमकर प्रभाव पड़ा। यह भारत मे मुगल साम्राज्य का समय था, एक ऐसा समय जब कला और वास्तुशिल्प का उत्थान हो रहा था।

मुगल बादशाहों को यह नयी कला पसंद आई। उन्होंने इस नयी खोज की गई तकनीक की बहुत प्रशंसा की और कई नमूने इस कला के बनवाए। पित्रा ड्यूरा की या पच्चीकारी की परिणामस्वरूप उभरी शैली खासतौर पर एक कला थी, जो अपने विशेष गुणों के कारण, अपनी परिकल्पना मे और प्रयोग मे यूरोपीय नहीं थी।

चित्र-17: पिएत्रा ड्यूरा
साभार: लेखक

भारतीय पच्चीकारी का प्रयोग अधिकांशतः वास्तुकला में किया गया न कि सजावट के कार्यों में।

संभवतः सबसे प्रसिद्ध भारतीय भवन जिसमे पच्चीकारी की कला दिखाई गई, वो ताज महल है, कदाचित जो मुगल काल की वास्तुकला के प्रतिष्ठित स्वर्णिम युग की निशानी है। पच्चीकारी के कुछ नमूने ऊपर दिखाये गए हैं। (चित्र-16 व 17)

ताज महल को बहुत भव्य तरीके से फूलों वाली पच्चीकारी से इसकी भीतरी दीवारों, फर्श और कब्रों मे इस्तेमाल किया गया और जिसमे बहुमूल्य रत्न, जैसे इंद्रगोप, लाजवर्त, फिरोजा, और मैलाकाइट का इस्तेमाल किया गया।

(https: //www.mayfairgallery.com/blog/pietra-dura-painting-stonel)

बोध प्रश्न 2

1) नीचे दिए गए वाक्यों में सही और गलत के निशान लगाएं:

जहांगीर और शाहजहां के काल की वास्तुशिल्प की मुख्य विशेषता क्या थी:

क) लाल बलुई पत्थर के बदले संगमरमर को निर्माण सामग्री के लिए लिया गया ।

ख) मेहराबों मे कई परतों वाले मोड़ का प्रयोग किया गया ।

ग) एकल गुंबद की जगह दोहरे गुंबदों का चलन हुआ ।

घ) भीतरी सजावट का काम रेखाओं और ज्यामितीय रेखांकन से बदल दिया गया ।

च) पच्चीकारी के काम का इस्तेमाल

2) लगभग 50 शब्दों मे ताज महल के वास्तुशिल्प पर एक टिप्पणी दीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

13.5 मंदिर निर्माण

तुर्की शासन के भारत मे स्थापित होने के समय (1191–92) से मंदिर निर्माण का इतिहास बहुत उथल पुथल वाला रहा। लगभग 300 साल तक उत्तरी भारत पर दिल्ली के सल्तनत की हुकूमत के कारण मंदिर निर्माण लगभग पूरी तरह ठप रहा। तत्कालीन शासक मंदिरों के बड़े पैमाने पर तोड़–फोड़ में और उससे प्राप्त भवन निर्माण सामग्री का इस्तेमाल, मूर्तियों और अन्य वस्तुओं को उखाड़कर, मस्जिद के निर्माण में और अन्य ऐसी ही इमारतों के निर्माण के लिए इस्तेमाल में लाया गया। रिहायशी इलाकों से दूर स्थित छोटे–छोटे मंदिर ही इस विनाश से बचे रहे। कदाचित पंद्रहवीं शताब्दी में मंदिर निर्माण की परंपरा का पुर्नत्थान हुआ और निर्माण कार्य को उल्लेखनीय गति मिली। उल्लेखनीय बात यह है कि इस मंदिर पुर्नस्थापन की प्रक्रिया की अखिल भारतीय स्तर पर कोई ठोस व्याख्या उपलब्ध नहीं है। इसलिये इसकी जरूरत और भी बढ़ गई है कि इस पुर्नस्थापन की प्रक्रिया का क्षेत्रीय अवलोकन किया जाए।

पश्चिमी भारत

हम अपने इस विवरण को पश्चिमी भारत मे गुजरात और राजस्थान से आरंभ करते हैं, जिसने मंदिर निर्माण की दिशा मे पंद्रहवीं शताब्दी में दो सौ साल बाद आई तेजी को देखा। यह पुनरुत्थान मुख्यतः जैन समुदाय के कार्यों में देखा गया, जिन्होंने यह सम्मान गुजरात के सुल्तानों से अंतर क्षेत्रीय व्यापार में अपनी ताकत के कारण स्थानीय अर्थ व्यवस्था में मूल्य संवर्धन करके प्राप्त किया। यह सम्मान अन्य हिन्दू समूहों को नहीं मिल सका, इसका कारण है कि उनको सल्तनत के लिए खतरे के रूप मे देखा जाता था। जैन मंदिर पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी के दौरान अधिकांशतः पवित्र स्थान गुजरात में शत्रुंजय, गिरनार पहाड़ियों और राजस्थान मे माउंट आबू पर बनाए गए। इसके अतिरिक्त, मंदिर निर्माण की योजनाएं उसी समय हिन्दू तीर्थ स्थानों मे आरंभ की गई जैसे द्वारका, सोमनाथ और शामलाजी। यह स्थिति यद्यपि अकबर के द्वारा सोलहवीं शताब्दी में मुगल राज्य–विस्तार विजय करते हुए 1572 में कुछ समय के लिए रूकी। अस्थायी तौर पर संभवतः जैन धर्म का प्रभाव और उसके कारण मंदिरों का निर्माण होना कम हो गया। सत्रहवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों ने जैन व्यापारियों की संपत्ति की वृद्धि का पुनर्जीवन देखा और इसके साथ ही मंदिर निर्माण प्रक्रिया को फिर से गति मिल गई। शत्रुंजय पहाड़ियों के पवित्र स्थल पर गुजरात में कम से कम तीन जैन मंदिरों का निर्माण हुआ (1619 मे, 1622 और सत्रहवीं शताब्दी में) राजस्थान मे उदयपुर मे 1651 मे भव्य जगदीश मंदिर का निर्माण हुआ।

चित्र-18: शत्रुंजय मंदिर परिसर
साभार: लेखक

शत्रुंजय में आदिश्वर मंदिर (1619), वर्धमान मंदिर (1622) और चौमुख मंदिर (17वीं शताब्दी) का निर्माण किया गया (चित्र-18)। जहाँगीर के शासन काल में आदिश्वर मंदिर का निर्माण अहमदाबाद के जैन दम्पति सावा सोमजी और राजलदेवी द्वारा कराया गया। महत्वपूर्ण यह है कि मंदिर के समर्पण के पत्तलेख मे जहांगीर का नाम आया हुआ है ।

जगदीश मंदिर (चित्र-19) का निर्माण उदयपुर मे सीसोदिया राजा राणा जगत सिंह (शासनकाल 1628–52) ने कराया था। यह शहर की मुख्य बाजार मे स्थित है और इसे भूतल से ऊपर उठाकर एक मंच पर बनाया गया है, जिससे कि इसे एक भव्य रूप प्रदान किया जा सके। "मंदिर में एक विशाल गर्भ गृह है और एक दो–मंजिला मंडप है इसकी छत तिरछे आमलकों के आकार के पिरामिड के ऊपर एक कलश रूप में पूर्ण होती है। मंडप के अंदरूनी भाग के बीच मे दोहरी ऊंचाई वाला रिक्त स्थान है, जो एक अनियमित अष्टकोण के रूप में है और उपर वाले भाग में एक सुसज्जित दीर्घा है। स्तम्भों पर आठ चमकीले खूँटीदार कोष्ठ है, जिन पर गुम्बदों का निर्माण किया गया है (जॉर्ज मिचेल, *लेट टेम्पल आर्किटेक्चर इन इंडिया:* 15 से 19 सेन्चरी, ओ यू पी, नई दिल्ली 2015, पेज 227–228)।

चित्र-19: शत्रुंजय मंदिर परिसर
साभार: लेखक

छत्रपति शिवाजी के शासनकाल में महाराष्ट्र क्षेत्र में मंदिर निर्माण मे पुनर्जीवन दिखा। सत्रहवीं शताब्दी में शिवाजी द्वारा शासित राजधानी रायगढ़ और सिंधुदुर्ग (एक द्वीप) में मंदिर निर्माण के दो महत्वपूर्ण उदाहरण उल्लेखनीय है। 1674 में अपने राज्यारोहण के समय शिवाजी ने रायगढ़ में एक मंदिर का निर्माण कराया जो जगदीश्वर मंदिर नाम से विख्यात है। यह पत्थर की बनी एक सामान्य संरचना है जिसमे बाहर से कोई सजावट नहीं की गई है। इसकी छत ईटों का गुंबद है जिस पर प्लास्टर किया गया है और भीतरी मंडप पर नीची गुंबददार छत है। दूसरा मंदिर सिंधुदुर्ग में है जिसे राजाराम ने अपने पिता शिवाजी के सम्मान में 1695 में बनवाया। शिवाजी की स्मृति को आगे बनाए रखने के लिए इस मंदिर का नाम शिवराजेश्वर रखा गया।

मध्य भारत

1191–92 में दिल्ली में, तुर्की शासन के स्थापित होने के पश्चात चार सौ सालों तक इस इलाके में मंदिर निर्माण कार्य बाधित रहा। केवल अकबर के शासन काल मे वाराणसी, वृंदावन और मथुरा तथा देवगढ़ मे मंदिर निर्माण कार्य हुआ। वाराणसी का विश्वनाथ मंदिर 1595 मे राजा टोडरमल द्वारा बनवाया गया (चित्र-20), वृंदावन का गोविंददेव मंदिर 1590 मे आमेर के राजा मान सिंह द्वारा बनवाया गया। देवगढ़ का वैद्यनाथ मंदिर जिसमे शिवजी का ज्योतिर्लिंग है राजा पूरन मल, (एक स्थानीय हिन्दू मुखिया) ने 1596 मे बनवाया। ये सभी तीन मंदिर बड़े भव्य आकार मे बनाए गए। यद्यपि, 1699 में राजा टोडर मल का मंदिर मुगल बादशाह औरंगजेब द्वारा ध्वस्त कर दिया गया और मथुरा के मंदिर भी 1670 मे उसके आदेशों से नष्ट कर दिए गए। इन बड़े आकार के मंदिरों के अतिरिक्त, दो छोटे मंदिर वृंदावन–मथुरा क्षेत्र में भी बनवाए गए। 1575 सं मे आमेर के राजा भगवान दास ने गोवर्धन में हरिदेव मंदिर बनवाया और वृंदावन में सोलहवीं शताब्दी के अंत में मदन मोहन मंदिर बनवाया गया।

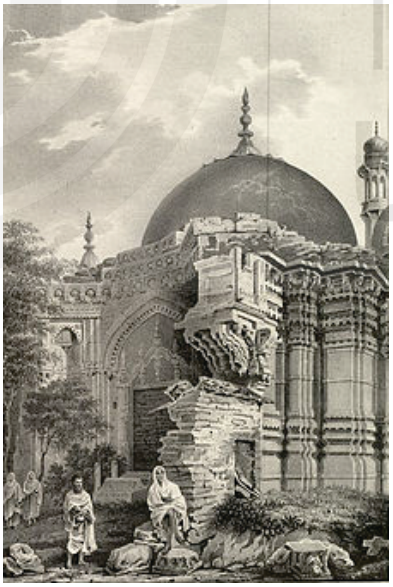

चित्र-20: राजा टोडर मल विश्वनाथ मंदिर – वाराणसी

साभार: https://commons.wikimedia.org/wiki/File: Temple_Of_Vishveshwur_ Benares_ by_James_ Prinsep_1834.jpg

"Temple of Vishveshwur, Benares," lithograph, by the Anglo-Indian scholar and mint assay master James Prinsep. Dated 1834. Coutesy of the British Library, London.

जहांगीर के शासन काल मे दो बड़े मंदिर बुंदेलखंड के बीर सिंह देव ने बनवाए। चतुर्भुज मंदिर उनकी राजधानी ओरछा मे और दूसरा मथुरा मे। दो छोटे मंदिर भी इस काल खंड मे बनवाए गए; 1627 सं में वृंदावन में युगल किशोर मंदिर बनाया गया और राधिका बिहारी मंदिर

सत्रहवीं शती मे ओरछा में बनाया गया। बाद में मुगल सम्राट शाहजहाँ द्वारा चतुर्भुज मंदिर छिन्न भिन्न कर दिया गया। औरंगजेब के फरमान से मथुरा–मंदिर भी नष्ट कर दिया गया, जैसा कि ऊपर बताया गया है। जबकि छोटे मंदिर उजड़ने से बच गए ।

पूर्वी भारत

पूर्वी भारत मे मंदिर निर्माण की प्रक्रिया कभी भी पूरी तरह से बंद नहीं हुई मुगल शासन काल मे। उड़ीसा, बंगाल आसाम और त्रिपुरा मे मंदिर नियमित आधार पर बनाए गए स्थानीय शासकों के और जागीरदारों संरक्षण मे। भगवान जगन्नाथ की भूमिका औपचारिक रक्षक के रूप मे होने के कारण ही उड़ीसा मे मंदिर निर्माण की क्रिया निर्बाध रूप से चलती रही। 1574 मे स्थानीय शासक वैद्यनाथभंज ने बरिपद मे बड़ा जगन्नाथ मंदिर बनवाया (चित्र-21)। यह मंदिर ढले हुए चबूतरे पर बिना सजावट धुली हुई दीवारों पर स्थित है और जगमोहन और रेखाडुएल से निहित है दोनों ही उनके ऊपर पतली फलकित मीनार चुप्पी साधे चार शेरों पर उभरे अमालक पर रखी गई है। जगमोहन को गहरी पिरामिड आकार की छत, दो स्तरों वाला पीड़, जिसे चारों दिशाओं मे थोड़ा सा उभार दिया गया गया है और ऊपर एक सामान्य घंटे के साथ दी गई है (जॉर्ज मिशेल पेज 168)। जयपुर मे दूसरा जगन्नाथ मंदिर सोलहवीं शताब्दी के द्वितीय अर्ध–काल का माना जाता है । इस मंदिर मे "जगमोहन अंदरूनी भाग "मे त्रिकोण आकार की छत है जिसमे असामान्य प्रकार के अर्ध वृत्त वाले किनारे हैं (पेज 172)। सम्बलपुर मे संबलेश्वरी मंदिर है जो देवी का मंदिर है। इसे स्थानीय शासक छत्र साई ने 1691 मे बनवाया गया (1690–1725)। गुंबद वाला केंद्र कक्ष, उत्तर से प्रवेश, दोहरी वीथिकाओं द्वारा चारों दिशाओं से घिरा है जिसमे खण्डदार मेहराब गोलाकार पंक्तियों रूप में दिखती हैं (पेज 178)।

चित्र-21: जगन्नाथ मंदिर
साभारः लेखक

यह देखना रुचिकर लगता है कि अकबर द्वारा बंगाल को मुगल साम्राज्य मे मिला लिए जाने के बाद मंदिर निर्माण की प्रक्रिया तेजी से बढ़ गई। जॉर्ज मिशेल इस अजीबोगरीब घटना के बारे मे इस प्रकार बताते हैं "तुलनात्मक आधार पर बंगाल मे मुगलों का नियंत्रण निश्चित तौर पर कमजोर रहा होगा क्योंकि विष्णुपुर के मालास और कुछ छोटे हिन्दू मुखिया जो कलना, बर्दवान ,पबना,और अन्य केंद्रों के थे अनगिनत मंदिर बनवाने मे सफल रहे, यद्यपि वो आकार मे तुलनात्मक रूप से छोटे रहे" (पेज 30)। इनमे से अधिकतर मंदिर स्वदेशी ईंटों और लाल

भूरी मिट्टी से निर्मित थे जो उस क्षत्र मे आसानी से निर्माण सामग्री के रूप मे मिल जाती थी। उल्लेखनीय है कि 1598 मे बना वैद्यपुर का कृष्ण मंदिर, पबना मे गोपीनाथ मंदिर (अब बांग्लादेश मे है) 1607 मे बना, 1643 मे विष्णुपुर मे बना श्याम राय मंदिर ,केशता राय मंदिर भी 1655 मे विष्णुपुर मे बनाया गया, 1679 मे बांसबेरिया मे वासुदेव मंदिर बनाया गया और मदन मोहना मंदिर 1694 में बिष्णुपुर बनाया गया। कोडला मे और मथुरापुर मे (सोलहवीं शती के अंत समय) ऊपर की ओर उठती हुई दो मीनारों वाले मंदिर बनाए गये। तीन मंदिर अठारहवीं शती के भी थे। एक कांतानगर (अब बांग्लादेश मे) कांताजी मंदिर के नाम से जाना जाता है, मंदिर जिसका निर्माण नजदीक के दिनाजपुर के शासक राजा प्राणनाथ ने 1704 मे करवाया और इसे उनके उत्तराधिकारी राजा रामनाथ ने 1722 मे पूर्ण कराया। अन्य दो कलना मे बने जिनको कृष्ण चंद्र मंदिर के नाम से जाना गया, इनका निर्माण 1752 मे बर्दवान के राजा त्रिलोक चंद राय ने कराया और दो मंदिरों का एक जोड़ा जिनको जोड़ा शिव मंदिर कहा गया 1753 मे निर्मित हुए। .

आसाम और त्रिपुरा मे भी कुछ कम पर इसी प्रकार मंदिर निर्माण की प्रक्रिया होते देखी गई। बंगाल की तरह, आसाम भी कुछ कुछ मुगल नियंत्रण में था और उस क्षेत्र मे बहुत से छोटे हिन्दू राजा थे, जिन्होंने मंदिर निर्माण को संरक्षण प्रदान किया। गुवाहाटी मे बने प्रसिद्ध कामाख्या मंदिर का उल्लेख किया जा सकता है। इसे राजा नर नारायण ने 1565 मे स्थापित करवाया । बाद मे इस मुख्य मंदिर मे अनेकों बदलाव किए गए। अन्य एक मंदिर 1583 मे हाजों मे बना इसे रघुदेव ने बनवाया जो सेना कमांडर राजा रघु राव का बेटा था। यह मंदिर हयग्रीव माधव मंदिर कहलाया। शिव सागर मे जॉयसागर ताल के किनारे तीन मंदिरों का समूह भी है। इनको 1698–99 मे अहोम राजा रुद्र सिंह (शासन 1696–1714) ने बनवाया। त्रिपुरा मे उदयपुर मे दो एक समान दिखने वाले मंदिरों का समूह है जिसको गणवती मंदिर कहा जाता है । इनका नाम त्रिपुरा के राजा गोविंद माणिक्य (शासन काल 1660–1676) की महारानी के नाम पर रखा गया और इसे 1669 मे बनाया गया ।

दक्षिणी भारत

दक्षिणी भारत में भी कृष्णा नदी के दक्षिणी भाग के प्रायद्वीप क्षेत्र मे तेरहवीं शताब्दी के अंत समय मे दिल्ली के सुल्तानों की सेनाओं की चढ़ाईयों से मंदिर निर्माण को धक्का लगा। किन्तु, यह अधिक देर तक नहीं रहा और विजयनगर साम्राज्य की स्थापना से मंदिर निर्माण/पुनर्निर्माण की क्रिया और नई योजनाओं की शुरुआत इस क्षेत्र मे फिर से प्रारम्भ हो गई। सोलहवीं शताब्दी का उत्तरार्ध इस बात की गवाही देता है कि प्रांतीय राज्यपालों के अंतर्गत, जिनको नायक कहा जाता था मंदिर निर्माण का कार्य बहुत अधिक उत्साह के साथ होता रहा। जॉर्ज मिशेल लिखते हैं कि "सोलहवीं शताब्दी और सत्रहवीं शताब्दी मे पूरे समय इन लोगों द्वारा मंदिर का निर्माण प्रायोजित ढंग से अपने–अपने मुख्यालयों में किया गया, (सेनजी, तंजावुर और मदुरै)। साथ ही साथ कांचीपुरम और कुम्भकोनन्द और तिरुवन्नामलाई तीर्थस्थल पर बने सबसे बड़े हिन्दू मंदिरों के निर्माण की तरह देश भर मे उस समय कहीं भी नहीं हो सका (पेज 36)

हम सेनजी महल मे वेंकटारमण मंदिर बनाए जाने की बात सामने रख सकते हैं और कृष्णप्पा-I (शासन काल 1567–1572) के नाम किया गया है। इसका मुख्य गोपुर पूर्वी दिशा के मध्य में है और सात मंजिल तक ऊंचा है। दूसरा उदाहरण श्रीमुशनम में है जो सेनजी के कृशनप्पा नायक-II (शासन काल 1572–1608) द्वारा बनवाया गया। इसे भुवराह मंदिर के नाम से जाना जाता है। "यह मंदिर छोटे स्थान पर है जो चारों तरफ से खंभों से घिरा है और पहले एक मंडप है जिसमे चार जोड़ी खंबे हैं जिन पर शेर के कोष्ठक दिखते हैं और सभी चतुष्कोणीय दीवालों के भीतर हैं" (पेज 315)।

13.6 सराय और पुल

सराय

सराय की खुली जगह वाली इमारत मध्य भारत की आवागमन मे आबादी की जरूरतों को पूरा करती उस काल की सबसे विशिष्ट सार्वजनिक इमारतों का प्रतिनिधित्व करने लगी। कठिन परिस्थितियों और निष्ठुर ग्रामीण जन मानस के कारण आम यात्रियों के लिए आराम और बसेरे की जगह जगह पर सुविधाओं की आवश्यकता पड़ी, दूर–दूर फैले कस्बों और शहरों वाले भारत में वास्तव में ये सुविधा संभव नहीं थी। सराय की संरचना मुख्य मार्गों के साथ साथ सुविधाजनक स्थलों मे जहां लोग अपने पशुओं के साथ सुरक्षित रूप में रात्रि को विश्राम कर सकें, को देखते हुए की गई और जहां उनको दाना पानी भी मिल सके। इन सरायों को राज्य शासन द्वारा और सम्पन्न नागरिकों द्वारा सेवा भाव में बनवाया गया।

चित्र-22: सराय
साभारः लेखक

भारत मे 13 वीं शती मे सरायों का उपयोग किया जाना आरंभ हुआ ,और सत्रहवीं शती के आते आते मुगल साम्राज्य के प्रमुख मार्गों पर मुख्य रूप से स्थापित किया गया। फिर भी सभी मार्ग इस संबंध मे लोकप्रिय नहीं हो सके। जबकि आगरा–दिल्ली–लाहौर–मुल्तान–काबुल मार्ग और आगरा–पटना–राजमहल मार्ग पर ज़्यादह सराय बनाई गई थीं ,यात्रियों को सभी प्रकार की सुविधा देते हुए। गुजरात मे आंतरिक स्थलीय मार्ग और वो जो सूरत और बुरहानपुर से ढाका तक जाता है, पर सराय की व्यवस्था कम थी।

चित्र-23: सराय
साभारः लेखक

ये सराय, जो कम से कम राज्य शासन द्वारा स्थापित की गईं थीं, उनमें एक सुगठित संचालन व्यवस्था थी। ठहरने के अतिरिक्त, सरायों मे यात्रियों के लिए अन्य बहुत सी सुविधाओं का इंतजाम किया गया था। इन मे खाना, बिस्तरे, पशु आहार, घोड़ों और अन्य चरनेवाले जानवरों के लिए चारे की व्यवस्था और सामान रखने की कोठरी आदि सम्मिलित थीं। सोलहवीं शती के उत्तरार्ध के अंतिम वर्षों के दौरान सभी सुविधाएँ अधिकांश यात्रियों को निशुल्क उपलब्ध थीं, संभवतः व्यवसाय और भ्रमण को प्रोत्साहित करने के लिए ऐसा किया गया होगा। सत्रहवीं शती मे इस स्थिति मे एक बदलाव आया। जबकि सुविधाओं की सूची मे बढ़ोतरी हुई, यात्रियों से शुल्क लिया जाने लगा। यद्यपि वो शुल्क नाममात्र का ही था, सराय मे ठहरने के समय जिन सुविधाओं का प्रयोग यात्रियों द्वारा किया गया।

बाहर से देखने पर सराय (चित्र-22 व 23) वर्गाकार या आयताकार, दीवार वाली दिखती थी, जनमें एक या दो प्रवेश द्वार थे, जिनमे से बड़े और भारी लदे हुए पशु आ सकें। दालान अधिकतर ऊपर से खुला हुआ होता था, भीतर की ओर अंदरूनी दीवारों के साथ कमरे और कक्ष बड़ी संख्या में होते थे। अधिकतर मामलों मे ये सभी कक्ष एक समान दिखते थे। लेकिन कभी कभी इनमे से कुछ कक्ष आमने सामने के ब्लाक के मध्य में स्थित थे जो अन्य सामान्य कमरों के मुकाबले आकार मे बड़े होते थे, और अक्सर इनमें अतिरिक्त जगह भी हुआ करती थी आले और कुटी के रूप मे जो दीवारों पर बनी होती थीं। आयताकार भवन के चारों कोनों मे भी काफी जगह होती थी, जो और इस निर्माण का आकार और रेखांकन सामान्य और बड़े कक्षों के मुकाबले बिल्कुल भिन्न प्रकार का होता था। भीतर से सराय के भवन को देखने पर आमतौर पर एक तंग बरामदा कमरों के सामने चारों दिशाओं मे होता था। इसके अतिरिक्त एक मस्जिद होगी और एक या दो कुएं मैदान मे होंगे, और एक सीढ़ी होगी जो कमरों की छतों तक जाती होगी, जो बड़े कक्षों या किनारे के कक्षों के एक ओर बनी होंगी। कभी कभी ये सीढ़ियाँ प्रवेश द्वार के साथ भी बनी होती हैं। प्रवेश द्वारों का ढका हुआ हिस्सा, कभी कभी दो तीन मंजिल का भी होता है, जिनमे कई छोटे कमरे और गलियां होती हैं।

एक बड़ी अच्छी तादाद मे सराय आज भी अपने मौलिक आकार मे बची हुई हैं और देश के विभिन्न भागों में पाई जाती हैं। सराय की सामान्य विशेषताएं जो ऊपर बताई गईं हैं बची हुई सरायों मे से कम कर दी गई हैं। एक यात्री को औसतन जगह जो रहने के लिए मिलती है, सराय के प्रयोग करने मे मध्यकालीन भारत मे उसके उपयोग के लिए पर्याप्त होती थी। यहाँ तक कि दो जनों के लिए आवश्यकता पड़ने पर इतनी जगह होती थी कि दो चारपाइयाँ या बिस्तर लगाए जा सके । बड़े कक्ष संभवतः धनी यात्रियों के लिए किराये पर लिए जाते थे। कुछ और बड़े आवासों मे अंदर की तरफ हमाम की भी सुविधा रहती थी। यद्यपि यह कोई सामान्य व्यवस्था नहीं थी। चूंकि सराय प्रथमतः सार्वजनिक संस्था थी, सराय मे प्रवेश के लिए किसी खास वर्ग या जाति के लिए किसी भी प्रकार का कोई निषेध नहीं था।

पुल

पूरे मध्यकालीन इतिहास मे पंजाब मे चौड़ी पाट वाली प्रमुख नदियों पर पक्के पुल नहीं थे। इसी प्रकार गंगा नदी की घाटियों मे पक्के पुल नहीं थे। जो तरीका अधिकतर काम मे लाया जाता था इन बड़ी नदियों को पार करने के लिए सामान्य यात्रियों द्वारा वो नावें हुआ करती थीं, जो कभी नदी पार करने के लिए महत्वपूर्ण नदियों मे सेवा के रूप मे लगाई जातीं थीं। अक्सर यात्री इन नावों से भी इन नदियों को पार करने में इस्तेमाल कर लेते थे जहां यह

आसानी से मिल जातीं थीं। लेकिन सेना के आक्रमण के दौरान इन नदियों को पीपे के पुल से भर दिया जाता था, जो सामान्यतः अस्थायी संरचना होती थी और उसे काम समाप्त होने के बाद हटा लिया जाता था। कुछ ऐसे भी संदर्भ मिलते हैं जिससे यह पता चलता है बड़ी बड़ी नदियों मे महत्वपूर्ण शहरों मे प्रवेश करने के लिए नावों पर बने पुल भी हुआ करते थे। इसी प्रकार, ऐसे भी प्रमाण हैं जिससे पता चलता है कि पर्वतीय क्षेत्रों मे लकड़ी के और झूलते हुए पुल भी थे।

पक्के पुल अधिकतर आगरा और दिल्ली से निकलने वाली मुख्य सड़कों पर ही बनाए गए थे । इनमे से अधिकांश भवन ऐसे बिंदुओं पर थे, जहां रास्ते नदियों द्वारा काटे जा रहे थे या छोटी नहरों द्वारा जो अपने प्राकृतिक रूप में उतार में रहती हैं और बरसात के मौसम मे उफान पर आ जातीं हैं। जैसाकि बर्नियर विशेष रूप से बताते हैं पक्के पुल, पूरे मध्य कालीन भारत मे बड़ी नदियों मे गायब थे। ऐसा लगता है उस समय तक पुल निर्माण की अभियांत्रिकी पूरी तरह से विकसित नहीं हो सकी थी, जिससे कि इतने बड़े पैमाने पर पुलों का निर्माण कार्य हाथ मे लिया जा सके।

वर्तमान पक्के पुलों के भौगोलिक वितरण को देखने से एक विशेष महत्व की बात का पता चलता है। उत्तरी मैदानों के क्षेत्र मे पक्के पुलों की संख्या का भार और बाकी पूरे देश मे बहुत तेजी से बदलता है, यह अनुपात 3:1 का है। इसको भिन्न भिन्न भौगोलिक परिस्थितियों के कारण भी माना जा सकता है, विशेषकर उपमहाद्वीप की भिन्न भौगोलिक भूभाग मे बहने वाली नदियों के अलग अलग व्यवहार के कारण।

मध्यकालीन एक पक्के पुल मे निम्नलिखित चार संरचनात्मक तत्व मिले होते हैं:

अ) नदी की तल भूमि पर नींव ,जिस पर खंभे खड़े किए जाते हैं,

ब) खंभे स्वयं के अपने ऊर्ध्व भार और चाप के दबाव को सम्भालते हैं, और बहते पानी के दबाव को भी,

स) छाप जो खंभों पर उठाए जाते हैं और जो मजबूत संरचना बनाते हैं ,सड़क का भार उठाते हैं, और

द) अंत मे दो किनारों के जोड़, बड़ी मात्रा मे उस भारी संरचना का बोझ बड़ी मात्रा मे उठाते हैं। निम्नलिखित विवरण मे हमने चार संघटकों पर ध्यान दिया है–

नींव – पक्के पुलों के निर्माण मे नींव का बहुत अधिक महत्व है। एक सुरक्षित नींव जो खंभों का और रखे जाने वाले चाप का वजन उठाने के काबिल हो, नदी के तल पर किसी चट्टान की तरह होनी चाहिए। भारत मे मध्यकालीन युग में ऐसी प्रक्रिया और तकनीक से नींव रखे जाने के प्रमाण बहुत कम मिलते हैं। ऐसा लगता है कि नावों को डूबा कर या कुएं खोद कर उस बिन्दु पर पहुँचा जाता था जहां पर नदी तल पर ठोस और मजबूत जमीन मिल सके, यही एक तरीका था। कनिंघम ने राय दी है कि डोंगरी मे सिंड पर बने पुल की जगह ऐसी थी जहां "नदी का भूतल बराबर पथरीला था और हर प्रकार का लाभ पक्के पुल को निर्मित किए जाने का मिल रहा था", इस बात की पुष्टि करता है। उन्होंने इस बात को उपयुक्त पाया कि नदी के भूतल में और गहरे जाने के बजाय नीचे नींव के आधार को चौड़ा कर दिये जाने की आवश्यकता रहेगी, ताकि कोई भी गलती हो तो उसको सुधारा की जा सके। एक

रुचिकर संरचना जो इस प्रकार का उदाहरण पेश करती है वो अकबर के काल मे सेंगुर नदी पर छपरघात मे बने पुल का है, जिसकी नींव इसी प्रकार रखी गई थी । यहाँ पर नींव को नदी के भूतल के लगभग बराबर स्तर पर डाला गया और उसकी चौड़ाई उसपर रखे गए खंभों की चौड़ाई से भी अधिक सात फुट तक थी/रखी गई।

राजगीरों द्वारा जो सामान्य विधियाँ अपनाई गईं नींव को नीचे नदी तल मे डालने की जगह सूखी हो यह अपेक्षा रहती थी। यह तरीका पश्चिम मे आम तौर पर काफरडैम बनाए जाने के उद्देश्य से काम लाया गया, लेकिन भारत मे इसे निपुणता से नहीं किया जा सका। इसके लिए उन्होंने एक बहुत कठिन विधि का प्रयोग किया, जिसमे पानी के बहाव को एक उचित स्थान पर नदी के ऊपर की ओर एक बांध बना कर एक दूसरी वैकल्पिक नहर मे डाला। यह बहुत संदेहजनक लगता है फिर भी क्या उन दिनों नदियों को सफलतापूर्वक मोडा जा सका होगा, जब तक कि पानी का बहाव मौसमी न हो और सूखे के मौसम मे न्यूनतम न हो जाता हो। एक समस्या वास्तव मे आएगी प्रमुख नदियों के संबंध मे, जिनमे सूखे के मौसम मे भी बड़ी मात्रा मे जल उपलब्ध रहता हो। संभवतः नदी के फाट को आधे मे रोक कर रखने की विधि, जिससे दूसरा आधा भाग सूखा रह सके, पूरी तरह सुनिश्चित नहीं हो सकी थी। बड़ी नदियों के संदर्भ मे, इस कारण पक्के पुल के निर्माण के लिए सूखी जगह प्राप्त किया जाना मुश्किल काम होता होगा ।

यहाँ यह जानना महत्वपूर्ण है कि पश्चिम मे सोलहवीं शताब्दी के प्रारंभ मे एक बहुत उन्नत विधि का प्रयोग नीव डालने के लिए होता था ।

भारतीय राजगीरों ने कोई उल्लेखनीय सुधार इस संबंध मे नहीं किया और पुरानी और नाकाफ़ी तकनीक का प्रयोग जो किया जा रहा था, कमोबेश सत्रहवीं सदी के अंत तक बिना किसी बदलाव के चलता रहा।

खंबे – पुलों के खंबे बहुत चौड़े बनाए जाते थे ,जिनकी औसत मोटाई लगभग पुल के पाट की दो–तिहाई के बराबर होती थी। उनको पानी की सतह से बहुत ऊपर नहीं रखा जाता था, जब तक कि खास भौगोलिक स्थितियां मजबूर न कर दें। विचार यह था कदाचित कि बाढ़ के समय पुल पानी मे डूबा रहे ताकि सारे पुल पर तेज बहाव वाले पानी का दबाव कम पड़े। अधिक छाप वाले पुलों मे , इसलिए प्रत्येक खंबे को इतना मजबूत बनाया जाता था कि सारे पुल के भार का दबाव जो ऊपर की ओर पड़ता था उसे वह सहन कर सके । इस नक्शे मे ,वस्तुतः खंबे ही आधार की भूमिका भी निभाते हैं, ताकि पुल का प्रत्येक व्यक्तिगत चाप अपने मे एक स्वतंत्र इकाई होता है, जो अपने बल पर दो खंबों को ताकत देता है। खंबों की डिजाइन मे जो अतिरिक्त चौड़ाई दी गई है कुछ नुकसान होने के बावजूद भी बनाए रखी गई। ऐसा लगता है कि खंबों के नक्शे मे वास्तुविद इस बात पर विश्वास नहीं कर पा रहे थे कि पतले खंबे इतने बड़े निर्माण का भार उठाने के काबिल होंगे और यह सुनिश्चित करने मे ही लगे रहे कि खंबों की चौड़ाई/मोटाई को बढा कर ही पुल के चाप को होने वाले संभावित खतरे के नुकसान से बचाया जा सके। इस प्रकार के डिजाइन मे भी लाभ था। चूंकि खंबों का प्रत्येक जोड़ा वस्तुतः चाप युक्त वृहत निर्माण का सारा भार उठाने मे लगा था, और बहुत थोड़ा भार ही किनारे के अनुपात मे बहुत कम ही चाप का पास के दूसरे खंबे पर जाता था, किसी भी एक या एक से अधिक खंबे मे हुए नुकसान का प्रभाव अन्य खंबों या पूर्ण निर्माण को नीचे नहीं गिरा देगा ।

चित्र-24: पुल – घाटमपुर
साभारः लेखक

चाप ऐसा लगता है कि चापों के निर्माण मे पत्थरों का उपयोग भारत मे 13 वीं शताब्दी मे किया गया और राजगीरों द्वारा इसे बेहतरीन विधि के रूप मे वास्तुशिल्प के लिए तुरंत अपना लिया गया। मध्यकालीन भारत मे पक्के पुलों के बड़े–बड़े निर्माण इसी सही चाप के सिद्धांत पर किए गए। लेकिन यह ध्यान देने योग्य है कि इन निर्माणों मे चाप की बनावट/आकार को घोड़े के नुकीले जूते की तरह रखा गया, जो परसिया से नकल किया गया लगता है, जहां इसे बहुत ही विकसित रूप मे इस्तेमाल किया जाता था (चित्र-24)। पुलों के निर्माण मे मुगल राजगीरों द्वारा अर्ध– वृत्ताकार चाप का प्रयोग न दिखाई देना जोकि पश्चिम मे बहुतायत से उपयोग किया जाता था, एक प्रकार से आश्चर्यजनक है।

जोड़ – पुल के अंत मे जोड़ की संरचना होती है, जो पुल के क्रम से लगे चापों पर इकठ्ठा पड़ने वाले क्षेतिजीय दबाव को सहन करता है। पुल के स्थायित्व के लिए, इस कारण मजबूत जोड़ आवश्यक हैं। लेकिन ऐसा लगता है कि मध्यकालीन युग के पुलों के निर्माण मे जोड़ों को मजबूती प्रदान करने के संबंध मे अधिक ध्यान नहीं दिया गया। जोड़ों के आकार और लंबाई को निर्माण स्थल की परिस्थितियों के आधार पर तय किया गया। इसलिए उस समय एक समान मानदंड इनकी परिकल्पना और आकार के बारे मे पुल के निर्माण किए जाते समय नहीं अपनाया जा सका । इस तरह सुझाव पहले दिया गया है कि मुगल जोड़ वाले पुलों के खंबे इस प्रकार डिजाइन किए गए थे कि वे आंशिक तौर पर जोड़ों का उद्देश्य भी पूरा कर सकें। यह संभव प्रतीत होता है कि नुकीले चाप चौड़े खंबों पर बने होने पर मजबूत जोड़ों के रख रखाव की ओर ध्यान रखे जाने की आवश्यकता को समाप्त कर देता था ।

बोध प्रश्न 3

1) इस अध्ययन काल के दौरान गुजरात मे हुए मंदिर निर्माण की क्रिया के बारे मे पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) इस अध्ययन काल मे उड़ीसा के मंदिरों पर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) सत्रहवीं शताब्दी के दौरान किन यात्रा मार्गों पर सराय की व्यवस्थाएं की गईं थीं?

.....

.....

.....

.....

13.7 औरंगजेब के समय का वास्तुशिल्प

यह भाग दो उपभागों में विभक्त है। पहले में औरंगजेब कालीन भवन निर्माण की गतिविधियों का उल्लेख किया गया है और दूसरे में औरंगजेब के शासनकाल के बाद के समय की वास्तुकला का जिक्र किया गया है।

3.7.1 मुख्य भवन

अपने पिता के विपरीत औरंगजेब की स्थापत्य में कोई रुचि नहीं थी। उसके पूर्वजों ने कला को काफी बढ़ावा दिया, परन्तु उसके शासनकाल में इन सब चीजों का महत्व काफी घट गया। पूर्ववर्ती मुगल शासकों की अपेक्षा औरंगजेब द्वारा बनाये गये भवन काफी कम हैं और इनका स्तर भी साधारण है। साम्राज्य की राजधानी दिल्ली में भी औरंगजेब के नाम से जुड़ी इमारतें कम ही हैं। औरंगजेब द्वारा बनवायी गयी इमारतों में औरंगाबाद स्थित उसकी बेगम रबिया उद दौन का मकबरा, लाहौर की बादशाही मस्जिद और लाल किला (दिल्ली) में बनी मोती मस्जिद है। आकार और बनावट में बादशाही मस्जिद दिल्ली की मस्जिद से मेल खाती है। इसमें एक बड़ा सभागार, खड़े होकर प्रार्थना करने का कक्ष और कक्ष के प्रत्येक कोने में मीनारें हैं। उपासना स्थल के प्रत्येक कोण पर चार छोटी मीनारें हैं। इसके उपासना कक्ष के दोनों और एक खास अंतर पर मेहराबी प्रवेशद्वार है। इसमें केवल एक चँदोवा है। इमारत में ज्यादातर लाल बलुए पत्थर का प्रयोग किया गया है। कहीं–कहीं नाम मात्र के लिए संगमरमर का

इस्तेमाल किया गया है। उपासना कक्ष के ऊपर तीन उभरे हुए गुम्बद खुबसूरत लगते हैं।

लाल किला (दिल्ली) में स्थित मोती मस्जिद इस युग की दूसरी महत्वपूर्ण इमारत है। इस इमारत के निर्माण में उच्च कोटि का संगमरमर लगाया गया है। आगरा के किले में शाहजहां निर्मित मोती मस्जिद से यह मस्जिद मेल खाती है। यहां केवल वक्रता ज्यादा उभर कर सामने आयी है। उपासना कक्ष के ऊपर तीन उभरे हुए गुम्बद बने हुए हैं जो एक ही आकार की बुर्जी के रूप में बनाये गये हैं।

औरंगजेब की पत्नी के मकबरे (चित्र-25) में ताजमहल की नकल करने की कोशिश की गयी है। लेकिन औरंगजेब का स्थापत्य शिल्पी मकबरे के कोने पर सही ढंग से मीनारों को स्थापित नहीं कर पाया है, जिसके कारण पूरे भवन का सामंजस्य बिखर गया है। ताजमहल की नकल करने की कोशिश असफल रही है। इसकी मीनारें पूरी संरचना से मेल नहीं खातीं।

चित्र-25: औरंगजेब की पत्नी का मकबरा – औरंगाबाद
साभारः लेखक

13.7.2 सफदर जंग का मकबरा

1707 ई. में औरंगजेब की मृत्यु के बाद साम्राज्य भरभरा कर गिर पड़ा। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में बनी कुछ इमारतें इस पतन की गवाह हैं।

चित्र-26: सफदर जंग का मकबरा – दिल्ली
साभारः लेखक

दिल्ली में स्थित सफदर जंग का मकबरा इस युग का सबसे महत्वपूर्ण भवन है (चित्र-26)। यह एक बड़े बाग से घिरा हुआ है और औरंगाबाद में बने रबियाउद्दौरान के मकबरे के समान यहां भी ताजमहल की नकल करने की कोशिश की गयी है। हालांकि इसके आकार प्रकार में बदलाव यह किया गया है कि इसकी मीनारें मुख्य भवन के हिस्से के रूप में ही निर्मित

हैं। ये स्वतंत्र ढांचे नहीं हैं। मुख्य भवन छत्तेदार चबूतरे पर खड़ा है। इसमें दो मंजिलें हैं और यह एक बड़े और लगभग गोलाकार गुबंद से आच्छादित है। ये मीनारें बुर्ज की तरह उठी हैं और इसके शीर्ष पर गुंबदनुमा छतरियां हैं। पूरा भवन लाल बलुए पत्थर से बना है, जिसमें संगमरमर की पट्टी दी गयी है। मेहराबों का अग्रभाग कम वक्र है परन्तु यह पूरे भवन की समग्र संरचना से अच्छी तरह मेल करता है।

बोध प्रश्न 4

1) औरंगजेब के समय की वास्तुशिल्प की गतिविधियों पर विचार कीजिए।

2) सफ़दर जंग के मकबरे पर एक टिप्पणी लिखिए।

13.8 सारांश

बाबर और हुमायूं ज्यादातर अपनी राजनैतिक समस्याओं में उलझे रहे। इसलिए उन्हें भवन निर्माण का बहुत कम अवसर मिला। हालांकि बाबर खुद बगीचों का प्रेमी था और अपने छोटे से शासनकाल में उसने भारत में कई बागान लगवाए थे। मुगलों की स्थापत्यगत गतिविधियों की असल शुरुआत अकबर के समय से हुई। उसकी इमारतें मुख्य रूप से लाल बलुए पत्थर से निर्मित हैं। अकबर के भवनों में मेहराबों और शहतीर शैलियों का सुन्दर सम्मिश्रण है। जहांगीर स्थापत्य की अपेक्षा चित्रकला में ज्यादा रूचि रखता था। हालांकि चित्रकला में रुचि होने के कारण समकालीन स्थापत्य में नयापन आया। चित्रकारी, पशुओं और फूल–पत्तियों के डिजाइनों का अलंकरण के लिए इस्तेमाल होने लगा और पित्राड्यूरा नामक नयी अलंकरण शैली जहांगीर के समय सामने आयी। शाहजहां के शासनकाल में मुगल स्थापत्य अपने उत्कर्ष पर पहुंच गया और इस समय संगमरमर का उपयोग ज्यादातर होने लगा। शाहजहां द्वारा निर्मित सफेद संगमरमर में ढला ताजमहल एक अनुपम और अमर कृति है। इसकी दोहरी – गुम्बद, मीनारें, बहु–पत्तीदार मेहराबें, आदि स्थापत्य कला के चरम उत्कर्ष की गवाह हैं। उसका उत्तराधिकारी औरंगजेब भवन निर्माण गतिविधि के प्रति उदासीन था। इसलिए उसके शासनकाल में कम भवनों का निर्माण हुआ है। औरंगजेब के बाद का काल पतन का काल था। अव्यवस्थित राजनैतिक माहौल में स्थापत्य में रुचि लेना मुगल शासकों के वश में नहीं था। इस माहौल में बड़ी इमारतों का निर्माण नहीं हो सकता था। इस काल का एकमात्र स्मारक दिल्ली स्थित सफदर जंग का मकबरा है।

मंदिर निर्माण का कार्य लगभग तीन सौ सालों के अंतराल के बाद पंद्रहवीं शताब्दी मे पुर्नविकसित हुआ। भारत के विभिन्न क्षेत्रों मे मंदिर फिर भी कोई एक समान रूप से पुर्नउत्थान नहीं दिखाते।

गुजरात और राजस्थान के क्षेत्र जैन संरक्षण के कारन पुर्नउत्थान हुए, जबकि अन्य जगहों पर स्थानीय शासकों ने अपने संसाधनों से मंदिर निर्माण कराए। बड़ी संख्या मे ये मंदिर समय के साथ जीवित रह गए जिससे हमे पुर्नउत्थान की एक झलक मिल जाती है । इसी काल खंड मे दो महत्वपूर्ण सार्वजनिक भवनों का विकास भी दिखता है– सराय और पुल, जिन्होंने यात्रा और व्यापार को आसान बनाया ।

सराय के कारण घुमक्कड़ यात्रियों को ठहरने का सुविधाजनक स्थान मिला और पुलों ने नदियों को पार करना आसान कर दिया ।

13.9 शब्दावली

कोष्ठिका : गुंबदाकार झिरी।

तोरण पथ : छतयुक्त मेहराबों की श्रृंखला।

मेहराब : ईंटों या पत्थर के खंडों से बना अपने बल पर खड़ा ढांचा जिसके ऊपर कोई ढांचा खड़ा किया जाता है।

बावली : सीढ़ीनुमा कुंआ।

ब्रैकेट : ताक दीवार का सहारा।

स्मारक समाधि : किसी की याद में बनायी गयी इमारत।

घुमावदार मेहराब : ऐसी मेहराब जो अंदर की ओर नोकदार हो।

स्तंभावलि : स्तंभों की एक पंक्ति।

सेतुमार्ग : पानी के ऊपर बना रास्ता।

बुर्जी : गुंबद का भीतरी भाग।

गुम्बद : एक चौकोर के ऊपर बनी उत्तल छत, भवन में अष्टकोणीय या वृत्ताकार स्थान

छज्जा : छत का निकला हुआ बाहरी हिस्सा।

रंगीन मेहराब : फूल–पत्तियों से अलंकृत मेहराब।

कलश : शिखर।

छतरी : एक खुली वीथी जिसकी छत स्तंभों के सहारे टिकी हुई हो।

खंभे : पत्थर और ईंट को जोड़कर बनायी गयी संरचना जो क्षैतिज भार उठाये रखते हैं।

पित्राड्यूरा : संगमरमर की खुदाई कर उसमें चमकीले पत्थरों को जड़ना और अलंकृत करना।

चंदोवा : आगे का हिस्सा।

गचकारी : चूने के प्लास्टर को खोदकर अलंकरण करना।

शहतीर : इस स्थापत्य संरचना में कड़ी और स्तंभों का उपयोग किया जाता है।

बुर्ज : भवन के साथ लगी मीनारें।

13.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) सही और गलत पर निशान लगाएँ:

क) गलत

ख) सही

ग) सही

घ) सही

2) उपभाग 13.2.2 देखें

3) उपभाग 13.2.2 देखें

बोध प्रश्न 2

सही और गलत पर निशान लगाएँः

i) सही

ii) गलत

iii) सही

iv) सही

v) सही

उपभाग 13.4.2 देखें

बोध प्रश्न 3

उपभाग 13.5 देखें

भाग 13.5 देखें

भाग 13.6 देखें

बोध प्रश्न 4

उपभाग 13.7.1 देखें

उपभाग 13.7.2 देखें

इस इकाई के लिए कुछ उपयोगी अध्ययन सामग्री

Brown Percy. 1944. *Indian Architecture (Islamic Period).* Bombay: D.B. Taraporewala.

Tadgell Christopher. 1990. *The History of Architecture in India: From the Dawn of Civilization to the End of the Raj.* London: Architecture Design and Technology Press.

Harle J.C. 1994. *The Art and Architecture of the Indian Subcontinent.* PLACE: Pelican.